IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भारत में बाल श्रम के इतिहास का एक सामाजिक एवं व्यवहारिक अध्ययन

Shekhar Sharma
Research Scholar
S.S.J Campus Law Faculty Almora

Guide Name: - Prof. J.S. Bisht
(H.O.D Law)
S.S.J Campus Almora

सार

इस शोध पत्र के माध्यम से भारत में बाल श्रम के इतिहास का सामाजिक एवं व्यावहारिक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।।। पेपर प्राचीन, मध्य कालीन और आधुनिक समय के दौरान बाल श्रम की प्रकृति और स्थिति की पड़ताल करता है।। और बाल श्रमिकों को दिए गए नामों और उनसे किए जाने वाले कार्यों की पहचान करता है।।। पेपर बच्चों को खरीदने और बेचने और उन्हें दास के रूप में रखने की प्रवृत्ति की व्याख्या करने का प्रयास करता है।।, जो प्राचीन काल में बढ़ गया था, और ऋग्वैदिक काल के दौरान बाल श्रम की स्थिति में थोड़ा सुधार कैसे हुआ क्योंकि बच्चे पारंपरिक खेती और पशुपालन के काम में लगे हुए थे। आधुनिक समय में औद्योगीकरण और शहरी करण के साथ बाल श्रम का शोषण बढ़ा है। हालाँकि, इस अवधि के दौरान समय और आयु सीमा निर्धारित करके उनकी स्थिति में सुधार करने के लिए विभिन्न अधिनियम पेश किए गए थे। शोधकर्ता बाल श्रम के इतिहास, प्रकृति और परिणामों के बारे में भी जानकारी प्रदान करता है।

कीवर्ड: सामाजिक बुराई ,बाल श्रम , समस्या, उन्मूलन।

परिचय

भारतीय सामाजिक परिप्रेक्ष्य में बाल श्रम की पिटना कोई नई उत्पत्ति नहीं है।। वरन् सभी कालों में मौजूद रहा है। यदपि इसकी प्रकृति और इसका विस्तार तत्कालीन समाज के सामाजिक आर्थिक ढांचे पार निर्भर करता था किन्तु बाल श्रम का चाहे कोई भी रूप रहा हो बच्चों को श्रम में लगाने का कार्य हमारे देश में सदियों से जारी रहा है।लेकिन एक अलग तथ्य यह भी है।।[1] कि एक बुराई के रूप में देखने की प्रकृति का आरम्भ औधोगीकीरण के बाद ही आरम्भ हुआ है।।"इक्यासी मेन्डलविंज ने अपने द्वारा स्पंदित पुस्तक "चिल्ड्रेल पेट वर्तक में इसी बात की पुष्टि करते हुए

[1] युग० सी० श्चाइल्ड लेबर इन सूरत टेक्सटाइल इण्डस्टी " सो सल चेन सितम्बर 1990 प्रष्ठ संख्या 29

लिखा है।। कि" बाल श्रम की एक बुराई के रूप में देखने की प्रकृति का आरम्भ मुख्यतः: बालकों का परिवार से बाहर बाजार में नवीन कार्य-दशाओं तथा अधिक शोषण की नया परिस्थितियों के उद्भव के साथ-साथ ही हुआ है।।[2]

फिलिप ऐरिस ने स्पष्टतः स्वीकार किया है।। कि भारतीय इतिहास में केवल वर्तमान युग में ही लौकिक मानवता वादी विचारधारा ने मानव जीवन की बाल्यकाल तथा युवा काल की अवस्थाओं एवं उनसे सम्बन्धित विभिन्न सामाजिक भूमिकाओं की अवधारणा को विकसित तथा व्यवहार में परिणत किया है। समस्या चाहे जिस भी रूप में रही हो और चाहे उसे किसी भी नीरिए से देखा जाता रहा हों। बाल श्रम समाज की कलंक ही कहा जायेगा। इतिहास गवाह है।। कि विभिन्न काल खण्डों में बाल श्रमिकों की स्थिति बड़ी ही दयनीय रही है।। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में इसे प्रायः तीन काल खण्डों में विभाजित कर इसका अध्ययन किया जा सकता है।।

सम्भव: कौटिल्य ने ही यह महसूस किया कि दास बच्चे भी आर्य बच्चों से अलग नहीं थे और वे लोग शारीरिक रूप से स्वास्थ्य भी नहीं थे। 8 वर्ष से कम उम्र के बच्चा का दास के रूप क्रय या विक्रय अमानवीय मानते हुए कोटिल्य ने इनके बेचने की प्रकृति को भी खत्म करने की बात कही तथा इतना ही नहीं कौटिल्य ने दास बच्चों से कठोर कार्य लेने पर भी प्रतिबद्ध लगवा दिया था। परन्तु फिर भी वे स्वतन्त्रता या आजादी एवं बराबरी के अवसरों से प्रायः वंचित ही किये जाते रहे है। इस प्रकार कौटिल्य ने भी इस बात को स्वीकार किया है।। कि बाल शोषण एक सामाजिक बुराई है।। और यह पूर्ण रूप से खत्म होनी चाहिए तथा बच्चो की भविष्य एक प्रकार इस भयानक बीमारी की चपेट आने से न केवल समाज का आधार अगर कमजोर होगा तो बल्कि एक स्वस्थ समाज की नींव भी कमजोर होगी।

भारत में बाल श्रम का इतिहास

भारत के सामाजिक परिप्रेक्ष्य में अगर देखे तो बाल श्रम की धपना की कोई नई उत्पत्ति नहीं हुई है। वरन यह सभी काल खण्डों में मौजुद रहा है। । यदि इसकी प्रकृति और विस्तार को देखे तो यह सामाजिक एवं आर्थिक ढाँचे पर निर्भर करता था बाल श्रम किसी भी रूप में हो बच्चों से श्रम करवाना हमारे देश में सदियों से चला आ रहा है। और बाल श्रम को एक सामाजिक बुराई रूप में तब पता चला जब वर्गीकरण परे विश्व व भारत में फैला । तथा उसका विस्तार व आरम्भ हुआ। इतिहास के विभिन्न काल खण्डों में बाल श्रमिकों की समाज में बहुत ही खराब व दयनीय स्थिति रही है। ऐतिहासिक द्रष्टिकोण से देखे तो इसे प्रकार तीन काल खण्डों में विभाजित किया जा सकता है। तथा विस्तारपूर्वक इसको क्रमबद्ध अध्ययन किया जा सकता है।

प्राचीन भारत में बाल श्रम

प्राचीन काल के भारतीय द्रष्टिकोण में बाल श्रम की स्थिति का आकलन अगर करें तो यह पाते है। कि बालकों से मजदूरी करवाने या बालकों को नियोजन सम्बन्धी कोई भी स्पष्ट प्रमाण प्राप्त नहीं होता लेकिन बालकों को दास के रूप में रखने का साक्ष्य स्पष्ट रूप से प्राप्त होता है। इस प्रकार बाल श्रमिको को दास के रूप में देखा जाये तो इसके अस्तित्व को होने से इनकार नहीं किया जा सकता है। अतः प्राचीन भारत में बाल श्रमिक दास के रूप में मौजुद थे। बालकों को दास के रूप वस्तु की भाँति बेचा व खरीदा जाता था। दास प्रथा के बारे में कौटिल्य ने कहा है। कि "बच्चों का क्रय विक्रय निम्न जाति में प्रतिबंधित नहीं थी। ऐसा इसलिए कि इन जातियों में पिछड़ापन तथा असभ्यता के लक्षण विधान थे इस प्रकार अगर देखा जाये तो यह पाते है। कि बहुत कम उम्र के बच्चों को भी दासों के रूप में लगाया जाता था और

[2] जनसेवा इन्टरनेशनल लेबर ऑफिस संस्करण 1979 के प्रष्ठ संख्या 3

इन बच्चों की उम्र लगभग- 8से 10 वर्ष के बीच की होती थी। इन्हें प्रायः छोटे-छोटे और सामान्य तरह के कार्यों में लगाया जाता था। इस प्रकार दास प्रथा वंशागत भी हुआ करती थी। तथा दासों के सन्तान दासों के रूप में जीवन यापन करते थे तथा दास के रूप में जीवन बताते हुए मर भी जाते थे। लीला दुबके ने प्राचीन भारतीय साहित्य का अवलोकन करते हुए कहा है। कि " सारे साहित्य में बालकों को कही भी उत्पादक कार्यों से अलग नहीं किया गया है। इतना ही नहीं परम्परागत साहित्य के उपदेशों को क्षेत्रीय भाषणों में इस प्रकार बदला गया है। कि वे उपदेश बाल श्रम को बढ़ाव ही देते है। " उदाहरण के लिए भागवत पुराण के एक श्लोक में स्पष्ट है। कि पुत्र को 5 वर्ष की आयु तक प्यार करें अगले 10वर्ष तक अनुशासित करें। तथा 16 वर्ष के पश्चात मित्र जैसा व्यवहार करें।

इस प्रकार ऋग्वेद जैसे ग्रन्थों की रचनाओं में भी बाल श्रम अपने परोक्ष रूप में प्रकट होता है। थ ही भारतीय समाज में व्याप्त वर्ण तथा जाति व्यवस्था के स्वरूप ने भी बाल श्रम को बढ़ावा ही दिया। इस तरह विभिन्न कालों में जाति के आधार पर व्यवसाय की निश्चितता,के कारण पिता ने बाध्य अवस्था से ही उन अबोध बालकों को वंशागत व्यवसाय में निपुण बना दिया। वैदिक काल का अवलोकन करें तो पाते है। प्रभावी एवं ताकतवर था कि शिक्षा केवल उस वर्ण के परिवारों के हाथों में केन्द्र रहा जिसके कारण अन्य वर्गों के अधिकांश परिवार अपने बालकों से श्रम कार्य ही करवाते थे।

मध्य कालीन भारत में बाल श्रम

भारत में मध्यकाल का समय मुगल राजाओं का बोल बाला था। इस काल में भारत में पारस्परिक कृषि व्यवस्था तथा पशुपालन की व्यवस्था में परिवर्तन देखने को मिलता है सल्तनत काल भू- राजस्व व्यवस्था कही न कही मुस्लिम विचारधारा से प्रभावित थी। तथा उसका सम्मिश्रण था। मुगल काल के राजाओं ने इस प्रकार भू- राजस्व संबंधी नियम बनाये ताकि अधिवेशन उत्पादन मुख्यतः इक्का प्रणाली द्वारा प्राप्त कर लिया गया था। इस प्रकार इस्लामी अर्थव्यवस्था सम्बन्धी सिख˜अन्तों को अपनाया गया ताकि इक्का प्रणाली चलता रहे। यह व्यवस्था मुख्य रूप से बदा के मुख्य काजी अबूझ-याकूत द्वारा लिखित " किताब-उलझ-खिराज में लिपि˜ है इस व्यवस्था में आधार खिराज और उससे है जो जमीनों की किस्म और उत्पादन शीलता पर निर्भर करता था। "वस्त्र" एक प्रकार का कर था जो कि हिन्दू जमींदारों और मुसलमानों काश्तकारों से वसूल किया जाता था। 'खिराज' की कोई निश्चित दर नहीं होती थी। तथा यह कुल पैदावार का 1/3 से 1/2 भाग तक होता था। तथा इस प्रकार भू-राजस्व की मनमाना व असमानता और शाही कर के भारी संकट उत्पन्न हो गया इसका परिणाम यह हुआ कि खेतिहर मजदूर संकट उत्पन्न व्यक्तिगत कृषि कार्य के अतिरिक्त अन्य कार्य ढुरना प्रारम्भ कर दिया और भुमिहीन मजदूर के रूप में कार्य करने लगे। ये श्रमिक अपनी आर्थिक दशा को सुधारने के रूप में कार्य करने लगे। ये श्रमिक अपनी दशा को सुधारने के लिए अपने बच्चा के भी काम पर ले जाने लगे। इसका परिणाम यह हुआ कि ग्रामीण स्तर के जो कारीगर थे जो अकेले कार्य करते थे। उसका पुराण परिवार ही एक कामगार इकाई बन गया था। तथा कार्यों का निर्धारण का आधार मूलतः वंशागत था। तथा बच्चे कम उम्र से ही अपने परिवार के परम्परागत कार्यों में भारी दबा व आर्थिक विषमता के कारण लगा दिये जाते थे। इस प्रकार मध्यकाल समय में कृषक वर्ग से भी दयनीय स्थिति दासों की थी। जिन्हें शासन में वस्तुओं की तरह बेचा व खरीदा जाता था उदाहरण स्वरूप – अलाउद्दीन खिलजी के समय कुछ वस्तुओं के मूल्य निम्नलिखित प्रकार से निश्चित किये गये थे। जो इस प्रकार है-

थोड़ा (उत्तम)-100 से 200 टका ।

गाय (उत्तम) -10 से 12 टका ।

दासी (सामान्यतः सुन्दरी) - 20 से 40 टका

दास -- 20-30

मुगल शासन काल में श्रमिक की अपनी कोई स्वतन्त्रता इच्छा नहीं थी। इस तरह श्रमिक द्वारा निर्मित वस्तु और स्वयं श्रमिक में कोई भेद नहीं थी। तथा। उन बच्चों को जैसे उसनें काम करवा सकते थे। कार्य चाहे जैसा हे या जिस प्रकृति का हो यदि उन्हें आदेश होता था तो उसे करना ही पड़ता था। इस प्रकार देय पारिश्रमिक प्राचीन सिद्धांत पर आधारित था। जिसका उद्देश्य केवल श्रमिकों को शोषण करना था ताकि उन्हें उतना ही दो जितने से वह जीता रहे और अनवरत कार्य करता रहे । इस प्रकार से श्रमिक की स्थिति दासों से अच्छी नहीं कहीं जा सकी थी। मुगल काल के महान राजा अकबर ने दासों के प्रति उदार दृष्टिकोण अपनाया और 1560 ई0 के आरम्भ से ही एक आदेश के द्वारा युग¯ बनियों को गुलाम मनाने की प्रथा पर रोक लगा दी। तथा गुलामों को गुलाम न कहकर अपना अनुयायी या चेला कहा जाने लगा। लेकिन अन्य शासकों की अपेक्षा अकबर के समय में उसके शासन काल में दासों व गुलामों के प्रति रवैया मानवता युक्त ही कहा जा सकता है इस प्रकार 1594 ई0 में उसने एक आदेश जारी कर यह कहा कि यदि कोई माता-पिता भूख या अत्यन्त दरिद्रता से पीड़ित होकर अपने बच्चे को बेचा देते है किन्तु बाद में यदि उनके पास उक्त मूल्य देने की सामर्थ्य हो जाती है तो जिस व्यक्ति को उन्होंने अपने बच्चे को बेचा है उससे प्राप्त किया गया मूल्य लौटा कर अपने बच्चे को वापस प्राप्त कर सकते है इतिहासकार मोडलैण्ड व स्मिथ ने कहा है कि “इस समय मजदूरों की आय बहुत अधिक नहीं होती थी। फिर भी इतनी थी कि वह भूखों नहीं मरता था और अकबर जैसे शासकों के शासन काल में बाल मजदूरों की क्या स्थिति थी इस बारे में स्पष्ट साक्ष्य नहीं मिलता किन्तु इतना प्रमाण अवश्य है कि अनुभवहीन मजदूरों की दशा कुशल कारीगरों की अपेक्षा बहुत ही निम्न स्तर कीकी। एक अनुभवहीन मजदूर को एक दिन में 2 दाम अर्थात् 9 रुपये का 1/20 भाग दिया जाता था। वही अनुभवी मजदूर को एक दिन में 7 दाम दिया जाता था। इस प्रकार श्रमिक तो अनुभवहीन मजदूरी की कोटि में आते रहे होगे और उनकी दशा बड़ी ही निम्न कोटि की रही हेराएगी। अकबर का उŸराधिकाजी जहाँ गीर एक कुशल शासक तो ना था किन्तु मानवता वादी गुणों में वह भी अपने पिता के समान था सिलवट प्रान्त में एक प्रथा व्याप्त थी कि मालगुजारी के बदले प्रायः कुछ लोग अपने बच्चों को हिजड़ा बनाकर गर्जन को दे देते थे। इस तरह प्रत्येक वर्ष सैकड़ों का जीवन बर्बाद हो जाता है यह प्रथा आगे चलकर कई जगहों में प्रचलित होने लगी जिसे मुगल शासक जागीर ने फरमान जारी कर यह प्रथा बन्द कराया । इसी आदेश में उसने बालकों के यौन शोषण पर सख्ती से रोक लगायी। श्रमिकों की दशा में जागीर के समय में भी विशेष सुधार परिकल्पित नहीं होता। बाल श्रमिकों की मांग सदैव बनी रही और इनकी आपत्ति मांग की तुलना में सदैव कम ही रही । इन्हें जबरन ले लिया जाता था। और मालिक अपने मुताबिक इनका कुछ भी कीमत अदा कर देता था। प्लेसर्ट ने जहाँगीर के काल में श्रमिकों की दशा वर्णन करते हुए कहा कि --- “एक कामगार अपने पिता के व्यवसाय के अतिरिक्त दुसरा व्यवसाय नहीं जानता था और न ही वे दूसरी जातियों में विवाद कर सकते थे। सामान्यतः तीन वर्गों के लोग जो सम्बन्ध थे परन्तु जिनकी स्थिति भी दासों से बेहतर नहीं थी। जैसे कामगार , चपरासी या नौकर इत्यादि।

आधुनिक भारत के सन्दर्भ में बाल श्रम:

यदि आधुनिक भारत के परिप्रेक्ष्य में बाल श्रम की समस्या को दो खण्डों में बाटा जा सकता है स्वतन्त्रता पूर्व बाल श्रम और स्वतन्त्रता के बाद बाल श्रम किन्तु जिस तरह से विभाजन किया गया , बच्चे के आर्थिक कार्य-कलामों से कभी भी प्रथम नहीं रखा जा सकते है इस प्रकार 18वीज व 19 वीज शताब्दी का अगर अवलोकन करें तो यह देखने को मिलता है कि अधिकतर जनसंख्या ग्राम उद्योग में लगी हुई थी वहाँ के हस्तशिल्प की माँग विदेशों में हुआ करती थी। सट्ट इण्डिया कम्पनी भी यहाँ पैदा हुए माल को अपने देश एवं अन्य देशों में भेजा करती थी। तथा अधिक से अधिक मुनाफा कमाती थी।

औधोगीकीरण होने से बड़े-बड़े कारखाने एवं उधड़ोगी खुलने लगे। जिससे एक प्रकार से तैयार माल सस्ता बिकने लगा तथा सस्ती चीजें निर्मित होने लगी। अब उनका स्वार्थ यह हो गया कि भारत का माल विदेशों में। आये। अपितु विदेशों का माल भारत में जाकर बिके। लेकिन कुछ समय के बाद अंग्रेजों को भारत में कल-कारखाने खोलने का विचार आया और इसके लिए इग्लैण्ड में अनेक कानून बने थे। जो श्रमिकों व मजदूरों के हित के लिए थे। इस प्रकार भारत में कारखाना खोलने तथा चाय के बगार खोलने पर किसी भी प्रकार का कोई प्रतिबद्ध नहीं था। अंग्रेजों ने कारखाने खोले और इन कारखानों के खोलने का परिणाम यह हुआ कि देखते ही देखते भारतीयों ने भी कारखाने खोले। तथा औधोगीकीरण के इस अमान्य विकास ने सामाजिक व आर्थिक विकास को एक नया मोड़ दिया। तथा परिवार आधारित अर्थव्यवस्था पुरी तरह से नष्ट होती चली गई और समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग वेतन भोगी श्रमिक बन कर रह गया। औधोगीकीरण व विज्ञान के ने आविष्कारों के चलते भारत में मुनाफा खोर का चलन तेजी से बढ़ा सन् 1905 में जब बॉम्बे में पहली बार बिजली का प्रवेश हुआ तब कपड़ा मिल के मालिकों ने रात और दिन में मजदूरों से काम लेना शुरू कर दिया। जिसमें किलकते के जुट के मिलनों में मजदूरों से 24धंसे काम लिया जाने लगा। सन् 1907 में एक कारखाना श्रमिक आयेगा बना जिसका काम कारखानों में श्रमिकों का स्थिति की जाँच करना था तथा 1909 में एक नया कारखाना अधिनियम आया तथा पुनः संशोधन करके 1911ई0 में ने कानून बनाकर इसमें व्यापक संशोधन किये। अन्य सुधारों के अतिरिक्त इस कानून के द्वारा बच्चों के लिए काम के धंसो का एक दिन में 6 धंसे तक समिति कर दिया गया। तथा उनकी आयु तथा स्वस्थ के लिए चिकित्सा प्रमाण-पत्र को अनिवार्य बना दिया गया तथा बालकों के रात्रिकालीन कार्य करने पर पूर्ण प्रतिबद्ध लगा दिया गया व खतरनाक कार्यों में नियोजित किये जाने पर पूर्ण रूप से रोक लगा दिया गया। इस प्रकार वेतन आधारित यह नया अर्थव्यवस्था एक प्रकार से निरंकुशता पूर्ण एवं मनमानी से भरा था। जिसमें मालिक पूर्णतः स्वतंत्र था। जितना समय काम करवाना चाहे बच्चों से काम करवा लेते थे। जिसमें स्त्री व बच्चे दोनों शामिल थे। इसका परिणाम यह हुआ कि बच्चों को आर्थिक विवशता में जाना पड़ा जिससे वे परिवार के लिए मजदूरी करके उपार्जन करने लगे। कार्य स्थल पर कठिन कार्यों में लगने से बच्चे एक ऐसे अस्वस्थ कर तथा हानिकारक वातावरण का निर्माण किया जिससे बच्चों का शारीरिक व मानसिक विकास को कुंठित होने लगा था। बाल श्रमिकों की संख्या में बहुत इजाफा हुआ तथा बच्चो के कार्य के धंसो की दशाओं का निश्चित नहीं था। तथा बालकों का शोषण दिन-प्रतिदिन बढ़ता चला गया।

1881 ई0 में कारखाना अधिनियम आया लेकिन इसमें बाल श्रम को रोकने के लिए कोई भी कानून नहीं थी पुनः 1884 ई0 में फिर एक कमीशन आया जिसमें बच्चों तथा स्त्रियों के सम्बन्ध में कानून बनाने का सुझाव दिया ताकि इन वर्गों से ज्यादा काम न लिया जा सके । इस प्रकार इस ने कानून के अनुसार बाल श्रमिकों की न्यूनतम आयु 7 वर्ष से बढ़ाकर 9

वर्ष कर दिया गया तथा अधिकतम आयु को भी 12 वर्ष से बढ़ाकर 14वर्ष कर दिया गया कार्य के घण्टे की अधिकतम सीमा को 9 धंसे प्रतिदिन कर दिया गया तथा रात्रि में बच्चों के नियोजन पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया गया। औधोगीकीरण व विज्ञान के ने आविष्कारों के चलते भारत में मुनाफा खोर का चलन तेजी से बढ़ा है सन् 1905ई में जब बॉम्बे में पहली बार बिजली का प्रवेशM हुआ तब से कपड़ा मिल के मालिकों ने रात और दिन में मजदूरों से काम लेना शुरू कर दिया। जिसमें कलकत्ते के जुट के मिलनों में मजदूरों से 24 धंसे काम लिया जाने लगा। सन् 1907 में एक कारखाना श्रमिक आयोग बना जिसका काम कारखानों में श्रमिकों की स्थिति की जाँच करना था तथा 1909ई में एक नया कारखाना अधिनियम आया तथा पुनः संशोधन करके 1911ई में ने कानून बनाकर इसमें व्यापक संशोधनों किये। अन्य सुधारो के अŸरिक्त इस कानून के द्वारा बच्चों के लिए काम के धंसे को एक दिन में 6 धंसे तक समिति कर दिया गया। तथा उनकी आयु व स्वास्थ्य के लिए चिकित्सा प्रमाण -पत्र को अनिवार्य बना दिया । गया तथा बालकों के रात्रिकालीन कार्य करने पर पूर्ण प्रतिबद्ध लगा दिया गया खतरनाक कार्यों में नियोजित किये जाने पर पूर्ण रूप से रोक लगा दिया इस प्रकार विश्व युद्ध के समय बाल श्रमिकों की समस्या को लेकर समस्त विश्व में आन दोलन का संचार हुआ और बाल श्रम की समस्या से निपटने के लिए अनेक अन्तर राष्ट्रीय मान दण्ड भी स्थापित किये गये तथा इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर सन् 1919ई0 समस्त विश्व में बाल श्रमिकों की समस्या को हल करने के लिए अन्तर राष्ट्रीय श्रम संधि की स्थापना की गई। अन्तर राष्ट्रीय श्रम संगठन ने विश्व-स्तर पर बाल श्रम की समस्या को निराकरण के बाद में बालकों के नियोजन की न्यूनतम आयु 14वर्ष निर्धारित की गई। इसके पश्चात भी आई0 एकल0 ओ0 अपने उधेश्यों को पुराण करने के लिए अनेक सिफारिश के रूप में श्रम मानक निर्धारित किया । भारत सन् 1919 से ही (आई0 एकल0 ई0) का सदस्य रहा और सन् 1922ई0 से स्थायी सदस्य बन गया है भारत में सन् 1922 में कारखाना संशोधनों अधिनियम पारित किया जो कि अन्तर राष्ट्रीय श्रम संधि की संस्तुति यों को लागू करने के लिए पारित किया गया। 1922ई0 के अधिनियम के द्वारा सरकार को यह शक्ति भी दी गई कि यदि वह चाहे तो कारखानों में भी लागू कर सकेगी जहाँ 20वर्ष से कम उम्र के मजदूर नियोजित हो। बाल श्रमिकों के हित में प्रावधान करते हुए बालकों की आयु 12से 15 वर्ष स्वीकार किया गया है श्रम कानूनों में वांछित सुधार तथा श्रमिकों ् स्थिति ् स्वास्थ्य तथा जीवन स्तर पर रिपोर्ट देने के लिए 1928ई0 में “रायल लेबर” कमीशन नियुक्त किया गया जिसने सन् 1931ई0 में अपनी रिपोर्ट पेश की। कमीशन की रिपोर्ट को ध्यान में रखने होये तथा दिये गये सुझावों के क्रियान्वयन के लिए 5वाक कारखाना अधिनियम 1934 पारित किया गया। बाल श्रम पर विशेष ध्यान केन्द्र करते हुए इस अधिनियम में बच्चे व वयस्क के अलावा तीसरा ध्यान केन्द्र करते हुए इस अधिनियम में जोड़ा गया। तथा 15से 17 वर्ष आयु के बालक युवा समझे जायेंगे वयस्क व उसके बच्चो के भी सभी आवश्यक सुविधाएँ प्राप्त होगी। कारखाना अधिनियम में बाल श्रमिकों की सुरक्षा के सम्बन्ध में कुछ प्रावधानों का अभाव था जिसे दुरा करने के लिए सन् 1938 में बाल नियोजन अधिनियम द्वारा रेलवे व बन दरगाह पर 15 वर्ष से कम आयु के बच्चों का नियोजन प्रतिबंधित कर दिया गया। अगले ही वर्ष सन् 1939ई में उक्त अधिनियम में संशोधन करते हुए बिल डिग बनाने छपाई रँगाई सीमेन्ट उत्पाद करने साबुन बनाने ् चमड़ा व अभ्रक काटने ् दियासलाई बनाने व आतिशबाजी आदि के कार्यों में 12वर्ष से कम आयु के बच्चों को किसी भी प्रकार के नियोजन को पूर्णतः प्रतिबन्धित कर दिया गया। सन् 1934ई में कारखाना अधिनियम में 7 बार संशोधन करके पुनः1946 में छठा कारखाना अधिनियम 1946 पारित किया गया। इसमें पुनः संशोधनों के द्वारा 1948ई में विधिवत अधिनियम बन गया। भारत की स्वतंत्रता के बाद पहला कारखाना अधिनियम बना जिसमें व्यापक संशोधनों किया गया। इस अधिनियम के

द्वारा अब 14 वर्ष से कम आयु के बाल श्रमिक मजदूरी नहीं कर सकते है। तथा 15 से 18 वर्ष की आयु के बालक युवा समझे जायेंगे और उन पर बच्चों के नियम ही लागू होगे। नियाज से पूर्व बालकों के पास किसी योग्य सर्जन द्वारा दिया आयु दिया गया आयु प्रमाण -पत्र होना अनिवार्य कर दिया गया।

स्वतन्त्रता की प्राप्ति के पश्चात संविधान-निर्माण के समय भी बालकों की स्थिति अत्यन्त दयनीय थी। इसका ध्यान में रखकर हमारे संविधान वेत्ताओं ने संविधान में व्यापक रूप से बच्चों के हितों को ध्यान में अनेक प्रावधान जोड़े गये। जिसमें प्रमुख रूप से बच्चों के हितों को ध्यान में रखकर विशेष प्रावधान बनाएगी। अनुच्छेद 23 एवं 24 में बालकों का शोषण से बचाना व उनका दुष्प्रचार न हो उसको रोकना ही मूल अधिकार में जोड़ा अनुच्छेद 45 व अनुच्छेद 39 में बालकों के शिक्षा व मनोरंजन के लिए अनेक हितकारी प्रावधान जोड़े। इसके पश्चात अगस्त 1974 में भारत सरकार ने बच्चा के सम्बन्ध में अपनी राष्ट्रीय नीति अपनायी कि बचपन और युवा अवस्था को विशेष रूप से शोषण से सुरक्षा प्रदान किया जाये और 14वर्ष से कम आयु के किसी भी बच्चे को किसी खतरनाक उधड़ोगी में नियोजित न किया जायें। मानव अधिकार की सार्वभौमिक घोषणा 1948 के दिए गये मानदण्डों के अनुसार करते हुए मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 पारित किया गया जिसके अधीन भी बालकों के अधिकारों के संरक्षण की बात की गई। इस प्रकार भारतीय संसद ने अपने ऐतिहासिक कदम बढ़ाते हुए सन्1986 में बाल श्रम (प्रतिवेश और विनियम अधिनियम1986) में पारित किया गया जिसका उद्देश्य कतिपय उद्देश्य कतिपय विशिष्ट उपक्रमों में 14वर्ष से कम आयु के बच्चों के नियोजन को पूर्णतः प्रतिबंधित कर दिया गया तथा अन्य क्षेत्रों में बालकों के नियोजन को विनियम करने के प्रभावी उपलब्ध किये गये। अगर अन्तर राष्ट्रीय मानदण्डों का प्रश्न है तो भारत में बाल श्रमिकों की संख्या सर्वाधिक होने के कारण अन्तर राष्ट्रीय संस्थाएँ भारत के सम्बन्ध में विशेष जागरूक रही है। और यहाँ तक कि श्रम दशाओं को अन्तर राष्ट्रीय मानदण्डों की सीमा में रखने के लिए सदैव ही प्रयत्नशील रही है फिर भी भारतवर्ष में यहाँ की परिस्थिति विशेष के कारण कुछ ऐसे कार्यक्षेत्र है जहाँ अन्तर राष्ट्रीय मान दण्ड नहीं अपनाये जा सके है

जैसे ----

(1) कृषि कार्य में नियोजन के सम्बन्ध में कोई न्यूनतम आयु सीमा निश्चित नहीं की गई है बगार में न्यूनतम आयु 12वर्ष निश्चित की गई।

(2) कारखाना अधिनियम में न्यूनतम आयु 14वर्ष है जबकि अन्तर राष्ट्रीय अभिसमय में 15वर्ष न्यूनतम आयु है।

(3) बाल नियोजन अधिनियम के अनुसार खतरनाक कार्यों में बच्चों के नियोजन को प्रतिबंधित करते हुए अन्तर राष्ट्रीय अभिसमय के विपरीत एक न्यूनतम आयु निश्चित की गई है।

(4) गैर औधोगिक नियोजन के सम्बन्ध में विभिन्न राज्यों में विभिन्न न्यूनतम आयु मान दण्ड रखे गये हैं।

तथा विभिन्न नियमों के क्रियान्वयन की भी समुचित व्यवस्था नहीं है।

निष्कर्ष

इस प्रकार निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि अगर बाल श्रम के इतिहास पर अगर द्रष्टा डाले तो हम यह पाते है कि किसी भी काल खण्डों में ऐसा समय नहीं रहा है कि तथा न ही किसी भी रूप में बाल श्रम मौजुद न रहा हो। समय के अनुसार बाल श्रम का स्वरूप तथा उसकी अवधारणा में भी विस्तार रहा हो। लेकिन समय के सापेक्ष अगर देखे तो बाल श्रम के स्वरूप और नाम मात्र बदलते रहे यह एक सामाजिक बुराई के रूप में देखने को मिलता है अनादि काल में

ही बच्चे परिवार में रहकर ही परिवार से बाहर रहकर ही आर्थिक किया कलापों से सदैव ही जोड़े गए है मध्य एवं प्राचीन काल में बच्चों को वस्तुओं की तरह ही खरीदा और बेचा जाता था। सल्तनत और मध्यकाल के शासकों ने बाल श्रम को समाप्त करने के लिए कोई गम्भीर प्रयास नहीं किया गया तथा आधुनिक काल में औधोगीकीरण और नगरीकरण के कारण ही बाल श्रम को एक सामाजिक बुराई के रूप में देखना और इसके रोकथाम का प्रयास भी इसी काल में हुआ ताकि बाल श्रम की समस्या का समाधान एवं प्रयास किये जा सके। आज सम्पूर्ण विश्व में बाल श्रम की समस्या का समाधान एवं प्रयास किये जा सके। आज सम्पूर्ण विश्व में बाल श्रम की समस्या को लेकर जिस जागरूकता का अभ्युदय हुआ वह बहुत ही हर्ष का विषय है तथा आज बालकों के श्रम को

मानवाधिकार के उल्लंघन की समस्या के रूप में देखा जा रहा है लेकिन यह कहना कि सुखदायी प्रतीत नहीं होता है कि नई -सहस्त्राब्दि की शुरूआत के साथ विश्व पटल पर जो ज्वलंत समस्याओं को चुनौतियों के रूप में विधान है जिसमें बाल श्रम अब भी उनमें से एक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ ----

(1) जेब0सी0 कुल श्रेष्ठ "चाइल्ड लेबर इन इण्डिया" संस्करण 1978

(2) डाक0 एस0 ए0 ध्यानी "जुरीसप्रुडेन्स ए स्टील आफत इण्डिया लगी थ्योरी"

(3) ऋग्वेद श्लोक संख्या 10, मण्डल सदुक्ति 9 में

(4) डाक0 मंजु गुप्ता" चाइल्ड ए डसा रायल्टी चाइल्ड लेबर इन इण्डिया "1987

(5) एकल0 पी0 शर्मा "दिल्ली सल्तनत" चतुर्थ संस्करण 1989

(6) डाक0 आशावादी लाल "भारत का इतिहास संस्करण 1998

(7) अमित कोहरा "बाल श्रम एवं अधिकार" संस्करण 2014

(8) भारत में बाल मजदूर सुभाष शर्मा संस्करण तृतीया 2010

(9) महावीर जैन" बाल श्रम विकास का मुद्दा "प्रथम संस्करण 2010

(10) नूरा एवं तम बोली "बाल विधियाँ" संस्करण

(11) डाक0 जय नारायण पाण्डेय" भारत का संविधान "संस्करण 2019

(12) डाक0 निशान जैन "असंगठित क्षेत्र में बाल मजदूर

(13) कैलाश सत्यार्थ "आजाद बचपन की ओर संस्करण 2019